ISSN No. 2349-4654
नाद - नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूजिक वर्ष : 1, अंक : 1, नवम्बर 2014

सिक्ख गुरुद्वारों में कीर्तन परम्परा

डॉ. जितेन्द्र कौर

एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत विभाग, खालसा कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर।

सार-संक्षेप

सिक्ख धर्म में कीर्तन को भक्ति का प्रमुख साधन माना जाता है। सिक्खों के कीर्तन में भक्ति के सभी रूपों का समावेश हो जाता है। सिक्ख धर्म में कीर्तन का क्या महत्त्व है इस विषय में इतना कह देना पर्याप्त है कि केवल कीर्तन द्वारा ही मनुष्य ब्रह्म अर्थात् परमपद् प्राप्त कर सकता है। सिक्ख गुरूओं की यह धारणा रही है कि लयतालबद्ध कीर्तन से मन को एकाग्रचित किया जा सकता है और उसे साधना के लिए प्रेरित किया जा सकता है। सिक्ख धर्म के लगभग सभी संस्कारों में कीर्तन का महत्त्व है। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त जितने भी कार्य होते है कीर्तन का आयोजन अनिवार्य है। मृत्यु के बाद मृतक की आत्मा की शांति के लिए भी एकमात्र उपाय कीर्तन है। सिक्ख गुरूद्वारों में गुरू नानक देव जी के समय से ही दो वक्त कीर्तन करने की प्रथा प्रचलित थी। एक सूर्योदय से पहले और दूसरी सूर्योदय के बाद। यह प्रथा इसी चौथे गुरू गुरू रामदास जी तक ऐसे ही चलती रही। पांचवे गुरू गुरू अर्जुन देव जी के समय से कीर्तन के लिए पांच चैकियों का प्रर्वतन किया गया। यह परम्परा आज भी सभी ऐतिहासिक गुरुद्वारों में विद्यमान है। इन पांच चैकियों का आधार वे भिन्न-भिन्न राग है जिनके अनुसार कीर्तन का गायन किया जाता है। प्रत्येक चौकीके लिए गायन का समय तथा राग विशेष का भी निर्देश दिया गया है। अमृतसर के हरिमन्दिर साहिब में गर्मियों में 20 घण्टे एवं सर्दियों में 18 घण्टे अनवरत कीर्तन होता रहता है। इसी प्रकार अन्य ऐतिहासिक गुरुद्वारों में भी ब्रह्म मुहूर्त में तीन बजे से कीर्तन का आरम्भ होता है और रात्री के नो बजे आरती के बाद शब्द गायन के साथ कीर्तन का समापन होता है। नित्य प्रति कीर्तन का आरम्भ श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी का प्रकाश करके होता है। तत्पश्चात् रागी जत्था शब्द कीर्तन करता है। इसके अलावा नित्यप्रति सायं बेला में सिक्ख भक्त श्री दरबार साहिब की परिक्रमा के चक्कर लगाते हुए कीर्तन करते हैं। जिसे वारी का कीर्तन कहते हैं। इन सभी विषयों पर प्रस्तुत शोध पत्र में प्रकाश डाला गया है। सिक्ख धर्म में कीर्तन का महत्त्व, कीर्तन का अर्थ, कीर्तन चौंकी की परिभाषा, कीर्तन के लिए प्रयुक्त गायन शैलियों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। सिक्ख गुरूओं के कार्य का प्रधान क्षेत्र पंजाब रहा। पंजाब के बाहर भी गुरूओं ने जाकर अपने भक्ति पूर्णकीर्तन एवं प्रवचनों द्वारा सर्वसाधारण को भक्ति मार्ग की ओर आकर्षित किया और उन्हें ईश्वर स्मरण हेतू कीर्तन की उपयोगिता को समझाया जो संगीत केवल विलासिता और कामुकता का ही उपादान बन कर रह गया था। उसे सिक्ख गुरूओं ने धार्मिक कीर्तन और हरिनाम का परिधान पहनाकर पुन: पवित्र एवं दिव्य कला के रूप में प्रतिष्ठित किया।

शोध-पत्र

भक्ति संगीत की विभिन्न परम्पराओं में से गुरबाणी कीर्तन परम्परा एक स्वतन्त्र तथा विशिष्टि स्थान की धारिणी है। इस परम्परा के संस्थापक और प्रचारक सिक्ख गुरुओं में जहाँ विभिन्न रागों व गायन शैलियों आदि का प्रयोग किया वहीं उन्होंने गुरमति संगीत प्रबन्ध के अनुसार गुरबाणी का गायन करने के लिए उपयुक्त अनुशासन भी कायम किया। इस अनुशासन का अंकुश प्रस्तुतकर्ता को आन्तरिक भावों की अभिव्यक्ति का मार्ग दर्शन करता है। सिक्ख गुरु साहिबानों ने इस परम्परा की स्थापना के लिए न केवल एक विशिष्ट संगीत प्रबन्ध ही तैयार किया, अपितु इसको व्यवहारिक रूप में प्रचार और प्रयोग में लाने के लिए गुरबाणी कीर्तन परम्परा स्थापित की।

कीर्तन परम्परा गुरु साहिबानों के संरक्षण में विकसित हुई। इस परम्परा को अधिक समृद्ध बनाने के लिए सिक्ख गुरुओं ने इसे सुनियोजित ढंग से गतिशील किया। सिक्ख धर्म में कीर्तन को बहुत महत्त्व दिया गया है। सिक्ख धर्म के अनुसार यह गुरुओं की पवित्र बाणी है। इसका उद्देश्य मनोरंजन करना नहीं है। मोक्ष प्राप्ति् के लिए इसका सुमिरन तथा लय ताल में गायन ही इसका उद्देश्य है। सिक्ख धर्म में ऐसी मान्यता है कि शब्दों का सस्वर और संगीत के साथ सुमिरन करना प्रत्येक सिक्ख का परम कर्त्तव्य है। इन पवित्र शब्दों का गायन गुरुद्वारों के अतिरिक्त धार्मिक अनुष्ठानों के लिए भी किया जा सकता है। शब्द गायन अर्थात् कीर्तन परम्परा से शास्त्रीय संगीत का पर्याप्त संवर्धन हुआ है। कीर्तन परम्परा सिक्ख धर्म के संगीतनुराग का ही परिचायक है।

उत्पत्ति के कारण

सिक्ख धर्म में कीर्तन परम्परा का जन्म क्यूं हुआ। हमारे लिए यह जानना भी अति आवश्यक है। सिक्ख धर्म के जन्मदाता श्री गुरु नानक देव जी ने इस बात को लक्ष्य किया कि जात-पात और ऊँच-नीच का बन्धन किसी भी धर्म के लिए घोर कलंक है। उन्होंने यह भी देखा कि मस्जिदों में नमाज के समय बादशाह और फकीर में भी कोई अन्तर नहीं रह पाता। लौकिक भेद-भाव धार्मिक क्षेत्र में मिट जाता है और अपने को निम्न समझने वाले लोगों के हृदय में आत्मसम्मान की भावना भरता है जो किसी भी जाति को प्रगति की दिशा में ले जाने के सहायक होती है। गुरु नानक देव जी की सूक्ष्मदृष्टि एवं पैनी बुद्धि ने इन सब बातों का गहन अध्ययन किया और धार्मिक क्षेत्र में इस प्रकार के ऊँच-नीच के भेद-भाव को नहीं आने दिया। उनका कीर्तन परम्परा को समवेत बनाने में मुख्य उद्देश्य यही प्रतीत होता है।[1]

महत्त्व

संसार के सभी धर्मों की तरफ देखते हुए कहा जा सकता है कि सिक्ख धर्म ने संगीत को बहुत सम्मान दिया है और गुरु नानक देव जी ने भाई मर्दाने की रबाब द्वारा संसार भर में सतनाम् का चक्र चलाने के लिए लम्बी उदासियों की तरफ से अन्त में सिक्ख धर्म को कीर्तन निरमोलक हीरा के रूप में संगीत को अद्वितीय वरदान दिया। सिक्ख धर्म ने कीर्तन परम्परा के द्वारा संगीत को साधारण सांसारिक स्तर से ऊपर उठाकर दिव्य और अलौकिक मण्डल में विचरण का माध्यम बनाया। कीर्तन द्वारा प्रभू से एकत्व प्राप्त करना ही सिक्ख धर्म का आदर्श है।

गुरु नानक देव जी का आदेश था कि कीर्तन राग और लय विहित होना अनिवार्य है क्योंकि इस प्रकार के कीर्तन में उच्चकोटि की तन्मयता की स्थिति प्राप्त होती है। अस्तु आरम्भ में राग कला में दक्ष मीरासियों द्वारा ही कीर्तन करने की प्रथा आस्तित्व में आई और जनसमाज...होकर इसका श्रवण करता था। यह प्रथा पांचवे गुरु अर्जुन देव जी के समय तक चलती रही और उन्हीं के काल में एक घटना विशेष घटित हुई। जिसके फलस्वरूप मीरासियों के हाथ से उनके कीर्तन सम्पादन का एकाधिकार छिन गया और गुरु का आदेश हुआ कि अब उनके शिष्य गन भी कीर्तन कर सकते हैं। फलस्वरूप सिक्ख समाज मे स्वर और ताल की शिक्षा प्राप्त कर कीर्तन करने का उत्साह प्राप्त हुआ और राग संगीत की प्रतिष्ठा में और अधिक वृद्धि हुई।[2]

सिक्ख धर्म ने भारतीय संगीत को विरासत के रूप में प्राप्त करते हुए कीर्तन की इस नई प्रणाली को जन्म दिया। कीर्तन ईश्वर की प्राप्ति के लिए रुचि एवं अभिलाषा जागृत करता है। तथा अनुकूल वातावरण उत्पन्न करता है। कीर्तन मन को निर्मल बनाकर ईश्वर प्राप्ति के योग्य बनाता है।

सिक्ख धर्म के लगभग सभी संस्कारों में कीर्तन का महत्त्व है। जन्म से लेकर मृत्यु तक जितने भी शुभ कार्य होते है। कीर्तन का आयोजन अनिवार्य है। मृत्यु के बाद मृतक की आत्मा की शान्ति के लिए भी एकमात्र उपाए कीर्तन है।

अर्थ

कीर्तन सिक्ख धर्म की भक्ति और पूजा का विशेष अंग है। गुरम अनुसार राग में ईश्वर के गुणगान करने का नाम कीर्तन है। यह वह ज्योति है जो कठोर से कठोर हृदय को पिघला कर ईश्वर के साथ प्रेम सम्बन्ध स्थापित करने योग्य बना देती है। गुरु साहिब सिक्ख संगत को आदेश देते हुए कहते है कि कीर्तन द्वारा नाम का सिमरन करते रहो। कीरतन नाम सिमरत रहो।[3]

कीर्तन की व्युत्पति संभवत: कीर्ति शब्द से हुई है। कीर्ति का अर्थ है यश नेक नामी। अत: कीर्तन में इष्टदेव का यशोगान अथवा गुणगान ही मुख्य लक्ष्य होता है। गुरुबाणी में कीर्तन को बहुत महत्त्व प्राप्त है। गुरमत संगीत के विभिन्न विद्वानों ने कीर्तन की परिभाषाएँ इस प्रकार से दी है। भाई कान्ह सिंह नाभा के अनुसार राग सहित करतार का गुण गाने का नाम कीर्तन है।[4] प्रो. करतार सिंह के अनुसार वाणी का निर्धारित रूप में गायन करते हुए आत्मिक मंडल में आनन्द मानना कीर्तन है।[5]

अजीत सिंह पेंटल के अनुसार कीर्तन उस गायन को कहते है जिसमें ईश्वर की भक्ति की जाती है अथवा उसका गुणगान किया जाता है।[6] कीर्तन का प्रयोजन ईश्वर के गुणगान द्वारा अपनी आत्मा की उन्नति करना है। कीर्तन संगीत में शब्द के भाव ही प्रधान होते है और राग एवं ताल रचना को रूचिकर और प्रभावशाली बनाने में सहायता करते है ताकि श्रोता का मन रसमय हो जाए और ध्यान केन्द्रित हो।[7]

सिक्ख धर्म में हरिमन्दिर से निरन्तर गुंजाएमान होने वाली अखंड कीर्तन की ध्वनि इस स्थान की मौलिक विशेषता है। 'बाणी गुरू है, गुरू है बाणी' के रूप में जागृत जोत गुरू ग्रन्थ साहिब के गुरू रूपी शब्द पर आधारित निरोल शब्द कीर्तन परम्परा की व्यवहारिक मर्यादा का मूल आधार श्री हरिमन्दिर साहिब की मौलिक विशेषता एवं शुद्ध कीर्तन परम्परा ही है जिसे सिक्ख धर्म के अन्य ऐतिहासिक एवं दूसरे गुरुद्वारों में प्रमाणित रूप से अपनाया एवं स्वीकार किया जाता है।[8]

हरिमन्दिर साहिब में आखंड कीर्तन की ध्वनि के नादात्मक दीदार तो मन की प्रवृतियों को एकाग्र करके ही सम्भव हो सकते हैं। परन्तु गर्मियों में 20 घण्टे एवं सर्दियों में 18 घण्टे अखण्ड प्रवाह की परम्परा की मिसाल से तो इस स्थान की महानता सहज ही प्रकट हो जाती है।

कीर्तन करने के लिए ना केवल सैद्धान्तिक रूप से गुरमत संगीत की स्थापना की गई बल्कि कीर्तन के महत्त्व को व्यवहारिक रूप में भी दिखाया गया। संस्थागत रूप में एक ही समय में अखंड रूप में की गई एक कीर्तन प्रणाली को कीर्तन चौकीके रूप में मान्यता दी गयी। कीर्तन चौकीसे भाव चार रागियों की मंडली।[9]

गावत चौकी शब्द प्रकाश अर्थात् भजन मण्डली जो परिक्रमा करते हुए शब्द गाए उसके लिए भी चौकी शब्द प्रयोग किया गया है। भाई वीर सिंह जी के अनुसार गुरमति संगीत में कीर्तन जत्थे को चौकी कहते हैं। चौकी में कम से कम चार रागी विद्यमान होते है।[10] एक महन्त यानि प्रमुख गायक दूसरे दो साथी सुर का साथ देने वाले और चौथा जोडी वाला (पखावजी) होता है। इससे कम नहीं ज्यादा भले ही जितने मर्जी शरीर हो सकते हैं। चौंकी का दूसरा प्रकार परिक्रमा करते हुए कीर्तन करना आज भी श्री हरिमंदिर साहिब में विद्यमान है।

उक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि चौंकी गायक द्वारा पूजा अर्चना का रवाईती कर्म है। वर्तमान समय में चाहे रागियों की गिनती केवल तीन ही रह गयी है परन्तु उनके कीर्तन जत्थे की पेशकारी को कीर्तन चौंकी का नाम ही दिया जाता है। सिक्ख धर्म में कीर्तन चौकीकी एक अपनी ही मर्यादा एवं महत्त्व है। कीर्तन चैकियों को अलग-अलग रागों एवं वाणी अनुसार परिभाषित किया गया है।

गुरु के कीर्तनीएं कीर्तन चौकीकी एक और परिभाषा देते हुए इसको चार अंगों की धारिणी होने के कारण चौकी का नाम देते है। यह चार अंग इस प्रकार हैं।

1. शान या लहरा

शान या लहरा के अर्न्तगत गाए जाने वाले सम्बन्धित राग में नगमा या धुन का वादन करते हैं। जिसके साथ तबला वादक द्वारा विशेष प्रकार का वातावरण सजाया जाता हैं यह परम्परा कीर्तनियों में आज भी देखने को मिलती है। इसके द्वारा जहां कीर्तन के लिए अनुकूल वातावरण बनाया जाता है वहीं तबला वादक अपनी कला के जौहर का भी प्रदर्शन करता है एवं श्रोताओं को संगीत एक विशेष माहौल में प्रवेश करवाता है।

2. मंगलाचरण

भारतीय संगीत में मंगलाचरण की परम्परा बहुत पुरानी है। मंगलाचरण के अर्न्तगत शब्द कीर्तन द्वारा परमात्मा एवं गुरू साहिबान की प्रसंशा में बेनती रूप में वाणी का गायन किया जाता है। इसके लिए एक ताल, चार ताल, आडा चैताल आदि तालों के विलम्बित ठेकों का प्रयोग किया जाता है।

3. शब्द गायन

मंगलाचरण के बाद रागात्मक विषय अनुकूल शब्द गायन किया जाता है। इसमें ध्रुपद, ख्याल शैली में श्री गुरू ग्रन्थ साहिब साहित्य में अंकित वाणी का गायन किया जाता है।

4. पऊडी लगाना

शब्द गायन चौंकी के अंत में श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी में अंकित वारो में से समय अनुसार श्लोकों का गायन करके पऊड़ी लगाई जाती है। पऊड़ी लगाने से अभिप्राय है कि पऊड़ी गायन करने की निर्धारित परम्परा है। यह एक श्लोक होता है और कीर्तन चौंकी के अन्त में इसका गायन होता है।

इस प्रकार कीर्तन की परम्परा में जिसे हम चौंकी कहते है सबसे पहले रागी सिंह शान या लहरा बजाकर उचित माहौल का निर्माण करते हैं। फिर मंगलाचरण के अर्न्तगत वाहेगुरू की प्रसंशा में श्लोक पढ़े जाते हैं तत्उपरान्त समय या अवसर के अनुकूल शब्द गायन किया जाता है और अन्त में शब्द गायन की चौंकी को पऊड़ी लगा कर समाप्त किया जाता है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि गुरु नानक देव जी ने जो अपनी साधना का केन्द्र करतारपुर बनाया था वहां प्रतिदिन प्रात काल एवं सायं काल में कीर्तन होता था। आसा की वार की कीर्तन परम्परा यही से शुरू हुई जो आज तक चली आ रही है।[11]

सिक्ख गुरुद्वारों में नित्यप्रति कीर्तन की जो परम्परा चल रही है इसका आरम्भ गुरु नानक देव जी के समय ही हो गया था। कीर्तन की दो चौंकियों की परम्परा गुरू नानक देव जी के समय से ही प्रारम्भ हो चुकी थी इनमें से पहली चौंकी आसा दी वार की चौंकी जिसके आरम्भ होने का समय सूर्योदय से पूर्व होता था और दूसरी चौंकी सोदर की चौंकी थी जिसका प्रारम्भ सूर्यास्त के पश्चात् निश्चित किया गया था।[12]

यह परम्परा चौथे श्री गुरु रामदास जी तक चलती रही पांचवे गुरु श्री गुरु अर्जुन देव जी ने जब गुरु ग्रन्थ साहिब जी की स्थापना की तो रागों के समय अनुसार कीर्तन की पांच चौंकियां निर्धारित की। उन्होंने पहली बार कीर्तन की मर्यादा श्री हरिमन्दिर साहिब में प्रारम्भ की। इतनी ही नहीं गुरु दरबार में कीर्तन करते वाले सत्ता बलवंड रबाबियों के नाराज होने के उपरान्त उन्होंने सिक्खों को कीर्तन करने के लिए प्रेरित किया एवं कीर्तन की शिक्षा भी दी।[13]

इस प्रकार रबाबियों की जगह गुरू घर के निशकाम शब्द कीर्तनीयों की परम्परा भी चली। इन निशकाम शब्द कीर्तनियों में भाई दीपा, भाई रूला, भाई नारायण दास, भाई उग्रसैन, भाई झाजू, भाई मुकंद, भाई केदारा आदि के नाम विशेष रूप से वर्णन योग्य है।[14]

गुरु अर्जुन देव जी ने जो पांच चौंकियों की स्थापना की वह इस प्रकार हैं—

1. आसा की वार की चौकी

इसका समय अमृत वेला हैं जो रात्री के करीब दो बजे से आरम्भ होता है इसके अन्तर्गत निम्नलिखित राग आते हैं—आसा, सोरठ, रामकली, भैरवी, प्रभाती, गौड़ी, देवगन्धारी आदि। राग सोरठ सामान्यत: रात में गाया जाता है, परन्तु आसा की वार की चौकीमें इस राग में कुछ शब्द गाए जाने की प्रथा है।[15]

2. आनन्द की चौकी

'आसा की वार' के कीर्तन के पश्चात् एक लम्बा शब्द 'राग रामकली', में गाया जाता है जो कि आनन्द साहिब के नाम से जाना जाता है। इसका समय छ: बजे से नौ बजे तक हैं राग रामकली के अतिरिक्त इसे निम्नलिखित रागों में भी गाया जा सकता है—गुजरी, तोड़ी, सूही, तुखारी, बिलावल इत्यादि।

3. चरण कमल की चौकी

इसे बिलावल की चौकीके नाम से भी जाना जाता हैं। क्यूंकि इसमें पांच शब्द राग बिलावल में गाए जाते हैं। इसका समय दिन के दस बजे से दोपहर तीन बजे तक है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित राग आते हैं—बिलावल, तोड़ी, गुजरी, देवगधारी, सूही, सारंग, बडहंस, बसन्त, मलीगौरा, माझ इत्यादि।

राग बसन्त बसन्त ऋतु में दिन अथवा रात के किसी भी प्रहर में गाया जा सकता है।

4. सोदर की चौकी

इसका गायन समय सूर्यास्त है। अर्थात् संध्या के चार बजे से सात बजे तक का समय जिसे हिन्दुस्तानी संगीत में सन्धि प्रकाश कहा जाता है। इसके लिए निम्नलिखित राग निर्धारित हैं—धनाश्री, जैतसिरी, बैराणी, मारू, आसा आदि। राग मारू अधिकतर अन्त्येष्टि क्रिया के अवसर पर गाया जाता है।

5. सुखआसन या कल्याण की चौकी

इसका समय सूर्यास्त के पश्चात् प्राय: सात बजे सन्ध्या से आरम्भ होता है। इसमें सबसे पहले राग कल्याण और राम कान्हडा के शब्द गाए जाते हैं, उसके पश्चात् अन्य रागों के शब्द गाए जाते हैं और अन्त में 'सोहिला' का पाठ किया जाता है। इस चौकीमें निम्नलिखित राग निर्धारित हैं—कल्याण, कान्हड़ा, बिहागड़ा, सोरठ, तिलंग, नट, नारायण केदार, मल्हार, जयजयवन्ती, आसा आदि।

सभी धर्मों के इस सांझे केन्द्र की एक यह भी महानता है कि इस महान स्थान पर जहां सिक्खी स्वरूप में मर्यादित रागियों को सत्कार दिया जाता था वहीं मुसलमान रबाबीयों को भी कीर्तन के पक्ष से पूर्व सत्कार मिलता था। दरबार साहिब में तन्ती साजों से निर्धारित रागों में समय एवं मौसम अनुसार कीर्तन का प्रारम्भ भी यहीं से हुआ जिसने गुरमत संगीत की शब्द कीर्तन परम्परा का अनोखा स्वरूप सबके सामने उभर कर आया।[16]

रागियों रबाबियों द्वारा दरबार साहिब श्री हरिमन्दिर साहिब में रागात्मक परम्परा के अलावा श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी ने बाबा बूढ़ा जी एवं भाई गुरदास जी के नेतृत्व में दरबार साहिब की परिक्रमा करते हुए चौंकी साहिब निकालने की परम्परा चलाई।[17]

चोंकी साहिब की यह कीर्तन परम्परा (वारियों का कीर्तन) संगीत के क्षेत्र में एक अलग ही विशेषता रखती है जिसका साधारण कीर्तन में स्थान निश्चित नहीं हो सका जबकि इस परम्परा का गायन गुरमत संगीत के लोक गायन प्रवाह से निराला एवं अलग संगीत विज्ञान का धारनी है। इतिहास अनुसार इस परम्परा का आरम्भ श्री गुरु हरगोबिन्द साहिब से हुआ।[18]

इस परम्परा के श्रद्धालुओं की ओर से गुटके तैयार किए गए हैं। जिससे इस कीर्तन में भाग लेने वाले कीर्तन प्रेमी शब्द याद करते हैं। दरबार साहिब में उक्त चौंकी साहिब कीर्तन परम्परा का संगीतिक अध्ययन करें तो इसका आलौकिक नजारा सुन के ही वर्णित किया जा सकता है। जिसमें मैलोडी एवं हारमनी के सुमेल द्वारा समूह गान का उत्कृष्ट नमूना सहज रूप में ही प्रस्तुत हो रहा होता है। इसमें समस्त भक्त जन एक समूह में चलते हुए दरबार साहिब में गुरुद्वारे के चारों ओर घूम कर परिक्रमा करते है और परिक्रमा करते हुए वारी आरम्भ करने वाला सिंह (भक्त) शब्द की एक पंक्ति बोलता है और उनके पीछे कुछ दूरी पर आने वाली संगतों का समूह उस पक्ति (शब्द) को दोहराता है। बारी-बारी से इन पंक्तियों का गायन सुनते ही बनता है। संगतों को ये शब्द पंक्तियां गुटका (शब्द की पुस्तक) साहिब से पहले ही याद होती है। इस प्रकार शब्द गाते हुए ये संगतों का समूह गुरुद्वारे के इर्द-गिर्द परिक्रमा करके वापिस गुरुद्वारे के सामने आकर समाप्ति करते हैं।[19]

कहते हैं कि बाब बुढा जी के श्री हरिगोबिन्द जी की गैर मौजूदगी में सिक्ख संगतों को कीर्तन द्वारा गुरु शब्द के साथ जोड़ने के लिए प्रेरणा एवं उत्साह दिया एवं समूह संगतों ने मिलकर साधारण धुनों पर कीर्तन का प्रवाह चलाया।[20]

इस प्रकार हमारे सामने यह बात भी आती है कि गुरुद्वारों में जो कीर्तन हो रहा है या होता आया है वह तीन प्रकार की गायन शैलीयों में किया जाता था जो इस प्रकार है—

सिख धर्म

सिख-सम्प्रदाय का भक्ति संगीत, मुख्यत: उत्तर-भारतीय शास्त्रीय संगीत पर ही आधारित है। परन्तु फिर भी कीर्तन दरबारों में प्राय: भिन्न-भिन्न कीर्तन शैलियाँ सुनने में आती हैं। प्रमुख रूप से प्रचलित गायन शैलियों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

1. शास्त्रीय संगीत पर आधारित
2. उपशास्त्रीय संगीत पर आधारित
3. लोकधुनों पर आधारित

यहां पर इन तीनों शैलियों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है।

1. शास्त्रीय संगीत पर आधारित

यहां यह उल्लेखनीय है कि आरम्भ से ही सिख गुरूओं में संगीत की परम्परा रही है। विभिन्न सिक्ख गुरूओं के समय में सिक्ख धार्मिक संगीत भारतीय संगीत की एक गायन विधा पद पर आधारित रहा है। उन दिनों ध्रुपद गायन शैली बहुत लोकप्रिय थी। इसलिए सिक्ख रागी रबाबीयों ने भी इस शैली को अपनाया और गुरू ग्रंथ साहिब के शब्दों की संगीत—रचना भी इसी ध्रुपद शैली में की। परन्तु धीरे-धीरे ख्याल गायकी का विकास हुआ तो सिख धर्म के कीर्तनकारों ने भी ख्याल गायकी को अपना लिया। रागी अपनी इच्छानुसार शब्दों को ध्रुपद तथा ख्याल शैली पर गाने के लिए स्वतंत्र हैं।

प्राय: हम गुरूद्वारों में देखते हैं कि संगीत में पारंगत रागी पहले 'नोमतोम' अथवा 'आकार' में राग का अलाप करते हैं। उसके बाद विलम्बित ख्याल शैली पर गाते हुए बोल-अलाप, बोल तान, गमक, सरगम आदि का प्रदर्शन करते हैं। इसके बाद उसी शब्द अथवा किसी दूसरे शब्द को द्रुत लय में गाते हुए छोटे ख्याल का रूप श्रोताओं के सम्मुख रखते हैं जिसमें वे अनेक प्रकार की तानों एवं पलटों का प्रयोग कर अपने द्रुत लय के शब्द को अलंकृत करते हैं। इसी प्रकार लयदारी के चमत्कार ध्रुपद धमार शैली में शब्दों को गाकर, प्रदर्शित करते हैं। इसमें शास्त्रीय संगीत की भॉति ही दुगुन, चौगुन, आड, कुआड सभी प्रकार की लयदारी द्वारा अपने पाण्डित्य का प्रदर्शन करने में रागी स्वतंत्र हैं।[21]

ध्रुपद धमार तथा ख्याल शैली पर आधारित कीर्तन को शब्द रीत कहा जाता है जिसे सिक्ख भक्ति संगीत में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। रीत का अर्थ बन्दिश होता है। रीत में रागी जत्था अनेक रागों एवं तालों का प्रयोग करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि एक ही रीत की विभिन्न कड़ियों को भिन्न-भिन्न रागों मे गाया जाता है। प्राचीन काल मे इसी शब्द रीत को 'टकसाली रीत' के रूप में जाना जाता था। यह परम्परागत रूप में चली आ रही है। यह सूलफाक, चैताल, धमार, झपताल, झूमरा, आडाचैताल, चंचल दीपचंदी आदि तालों मे निबद्ध होती है।

इस क्रिया को 'गुलदस्ता' कहते हैं। प्राय: इसे रागी लोक कीर्तन के अन्त में प्रस्तुत करते हैं। इसे कोई साधारण रागी अथवा कीर्तनकारी प्रदर्शित नहीं कर सकता इसके लिए कुशल रागी होना आवश्यक है। क्योंकि इसमें बिना रूके रागों में परिवर्तन और साथ ही साथ तालों में परिवर्तन उपस्थित कर देना एक कुशल एवं उच्चकोटि के रागी का ही सामर्थ्य है।

कीर्तन की समाप्ति पर किसी किसी अवसर पर सिक्ख रागी शास्त्रीय संगीत के तराने के समान एक बंदिश का गायन भी करते हैं। यह बन्दिशें—'संगीतात्मक छन्द' के नाम से 'दशम ग्रंथ' में संकलित हैं। इनमें गम्भीर नाद उत्पन्न करने वाले शब्द होते हैं जो नगाड़े के बोलों से मिलते-जुलते हैं।

कीर्तन की एक अन्य शैली 'पड़ताल' के नाम से गुरूद्वारों में प्रचलित है, जिससे राग तो वही रहता हैं, केवल उसकी ताले परिवर्तित हो जाती हैं। इसका प्रयोग भी कुशल रागियों द्वारा संभव है। गुरू ग्रंथ साहिब में 11 रागों (कान्हडा, बसन्त, रामकली, आसा, देवगन्धारी, नट्टनारायण, भैरव, सारंग, प्रभाती, मल्हार) में पड़तालें उपलब्ध होती हैं।

यहां पर यह बता देना आवश्यक होगा कि सिक्ख गायकी की वही विशेषताएं हैं जो पटियाला घराने में पाई जाती हैं इनकी आवाज बनाने की अपनी एक स्वतंत्र शैली है। खुली आवाज का जोरदार गाना, भली प्रकार सजी हुई गीत की छोटी बंदिश, आलाप में छोटी-छोटी, सशक्त तानों का वैचित्रय एवं कला का चमत्कृत करने के लिए राग की शुद्धता को छोड़कर थोड़े समय के लिए समप्रकृति रागों से सम तथा विषम रूपों में लगाते हुए पुन: फिर राग में वापिस आते हैं जिससे प्रभावित होकर श्रोतागण मुग्ध हो उठते हैं। इनमें मुर्कियों, सपाट तानों तथा गमक की तानों का एक विशेष ढंग होता है।[22]

2. उपशास्त्रीय संगीत पर आधारित

ऐसा संगीत जो जनरूचि के अनुसार प्रस्तुत किया जाए उसे उपशास्त्रीय संगीत कहते हैं। प्राय: कीर्तन सत्संगों में भी रागियों को जनरूचि का ध्यान रखना पड़ता है। क्योंकि ऐसा जरूरी तो नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति की समझ में शास्त्रीय संगीत आ जाए तो ऐसी अवस्था में रागियों को आम जनता कं संगीत पर निर्मित धुनों का प्रयोग करते हुए शब्द गाने पड़ते हैं। जिनके अन्तर्गत कव्वाली, ग़ज़ल, ठुमरी की शैलियों में निबद्ध शब्दों का गायन हैं। इन गायन शैलियों की विधाओं को आधारित करके लोक वाद्यों जैसे—करताल, ढोल, चिमटे, मंजीरो, छैना आदि के साथ गाया जाता है।

3. लोकधुनों पर आधारित

लोक धुनों पर आधारित एक अन्य कीर्तन शैली 'वार' गायन कहलाती है। यह एक प्रसिद्ध तथा लोकप्रिय गायन शैली है। पंजाबी साहित्य में 'वार' उस कविता को कहते हैं जिसमें किसी शूर वीर द्वारा रणभूमि में दिखाई गयी शूरवीरता का वर्णन हो। साधारणत: युद्ध के समय सैनिकों को प्रोत्साहन देने के लिए वीरता से भरे जो गीत गाए जाते हैं उन्हें 'वारे' कहते हैं। इसकी कविता में वीर रस प्रधान होता है।

वारों का इतिहास बहुत पुराना है। गुरू साहिबों के काल में भी वार लोक काव्य रूप में प्रचलित था। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में आई हुई वारें प्रभु के यशोगान के लिए गाई जाती हैं। इसमें दुनियावी लड़ाई का जिक्र नहीं मिलता अपितु मनुष्य की काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि शत्रुओं के दमन का जिक्र आता है। सबसे पहले श्री गुरू नानक देव जी ने भक्ति भावना के लिए प्रचलित रागों का प्रयोग किया उनका अनुसरण करते हुए बाकी गुरू साहिबान ने भी रागों में वारें रची।

लोक धुनों पर आधारित कीर्तन गायन का एक अन्य ढ़ंग भी प्रचलित है। जिसमें संगत भी भाग लेती हैं। इस प्रकार के कीर्तन को 'जोटियों के शब्द' कहा जाता है। यह परम्परागत रूप से लोक संगीत और पुरातन धारणा (तर्ज) पर आधारित होता है। और शताब्दियों से इसी रूप में चला आ रहा है। इस प्रकार का कीर्तन अत्यंत सरल होता है। प्रत्येक शब्द से पहले स्थाई होती है, जिसे रागी स्वयं गाता है। शेष सारी संगत मिलकर उसी पंक्ति को दोहराती है। दोबारा फिर अगली पंक्ति गाता है और संगत उसके पीछे-पीछे गाती है। इस कीर्तन शैली में खड़ताल, ढोलक, चिमटा, मंजीरा और छैने आदि वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के शब्दों का गायन गुरुद्वारों में गुरूपर्वों आदि के अवसर पर किया जाता है। शहरों में बड़े-बड़े नगर कीर्तन तथा प्रभातफेरियों के समय पर ऐसा कीर्तन होता है। इन अवसरों पर इस प्रकार का कीर्तन जन साधारण को आत्मविभोर कर देता है। यहां रागों पर आधारित कीर्तन नहीं होता।

इस प्रकार के शब्दों का गायन स्त्रियां भी करती हैं। सिख धर्म में जिस प्रकार पुरूष गायक होते हैं। उसी प्रकार स्त्रियों को भी शब्द गायन की पूर्ण स्वतंत्रता है। ये सामूहिक रूप से कीर्तन गायन तथा गुरू ग्रंथ साहिब के पाठ एवं कीर्तन में भाग लेती है। गुरूद्वारों में स्त्रियों के विशेष दीवान का प्रबंध किया जाता है, जिन्हे स्त्री सत्संग कहा जाता था। गुरूद्वारों में बाल-दीवान भी होते हैं, जिनमें छोटे-छोटे बच्चों को कीर्तन के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सिक्ख शब्द कीर्तन समाज के प्रत्येक वर्ग, शास्त्रीय संगीत तथा लोकधुनों पर आधारित कीर्तन संगीत रूचि रखने वाले श्रोताओं की रूचि को संतुष्ट करता है। यह शास्त्रीय संगीत के अनुभवी व्यक्ति को विभिन्न रागों तथा प्रचलन में आये हुए तालों में

निबद्ध शब्द रीतों के माध्यम से आनंद प्रदान करता है। उपशास्त्रीय संगीत में रूचि रखने वाले श्रोताओं के लिए कव्वाली, ग़ज़ल आदि शैलियों पर आधारित कीर्तन संगीत उपलब्ध कराते हुए उन्हे आत्मविभोर करता है जो लोग लोकधुनों में कीर्तन सुनना चाहते हैं, उन्हें वह 'जोटियां दे शब्द' आदि सुनाकर संतुष्टि करता है। इस प्रकार सिक्ख धार्मिक संगीत में इन तीनों शैलियों का विशिष्टि स्थान है।

पाद-टिप्पणियाँ

1. पैन्तल अजीत सिंह, सिख गुरुद्वारों के हरि कीर्तन में शास्त्रीय संगीत की परम्परा, पृ. 13.
2. पैन्तल गीता, पंजाब की संगीत परम्परा, पृ. 12.
3. गुरु ग्रन्थ साहिब, पृ. 618.
4. नाभा भाई कान्ह सिंह, महान कोश, पृ. 332.
5. सामाजिक विज्ञान पत्र, गुरमत विशेष अंक अंक, पृ. 88.
6. पैन्तल अजीत सिंह, सिख गुरुद्वारों के हरि कीर्तन में शास्त्रीय संगीत की परम्परा, पृ. 14.
7. बावरा जोगिन्द्र सिंह, भारतीय संगीत की उत्पत्ति एवं विकास, पृ. 49.
8. सिंह गुरनाम, गुरमत संगीत प्रबन्ध ते प्रासार, पृ. 59.
9. नाभा भाई कान्ह सिंह, महान कोश, पृ. 449.
10. भाई वीर सिंह, पृ. 882.
11. सिंह किरपाल, वारां भाई गुरदास, पृ. 38
12. पैन्तल अजीत सिंह, सिख गुरुद्वारों के हरि कीर्तन में शास्त्रीय संगीत की परम्परा, पृ. 106
13. सिंह संतोष, गुर परताप सूरज ग्रंथ, पृ. 2101.
14. सिंह गुरनाम, गुरमत संगीत प्रबन्ध ते प्रासार, पृ. 58.
15. पैन्तल गीता, पंजाब की संगीत परम्परा, पृ. 124.
16. सिंह गुरनाम, गुरमत संगीत प्रबन्ध ते प्रासार, पृ. 58.
17. वही, पृ. 60.
18. वही, पृ. 60.
19. दरबार साहिब, अमृतसर से प्राप्त जानकारी अनुसार।
20. सिंह गुरनाम, गुरमत संगीत प्रबन्ध ते प्रासार, पृ. 60.
21. पैन्तल अजीत सिंह, सिख गुरुद्वारों के हरि कीर्तन में शास्त्रीय संगीत की परम्परा, पृ. 52.
22. वही, पृ. 52.

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

पैन्तल अजीत सिंह, सिख गुरुद्वारों के हरि कीर्तन में शास्त्रीय संगीत की परम्परा, लखनऊ भातखंडे संगीत विद्यापीठ, 1963

पैन्तल गीता, पंजाब की संगीत परम्परा, नई दिल्ली, राधा पब्लिकेशन्स अंसारी रोड, दरियागंज, 1988

गुरु ग्रन्थ साहिब

नाभा भाई कान्ह सिंह, महान कोश, पटियाला भाषा विभाग, पंजाब 1976

सामाजिक विज्ञान पत्र, गुरमत विशेष अंक अंक

पैन्तल अजीत सिंह, सिख गुरुद्वारों के हरि कीर्तन में शास्त्रीय संगीत की परम्परा, लखनऊ भातखंडे संगीत विद्यापीठ, 1963

बावरा जोगिन्द्र सिंह, भारतीय संगीत की उत्पत्ति एवं विकास, जलंधर ए.बी.एस. मॉडरन मारकीट, 1994

सिंह गुरनाम, गुरमत संगीत प्रबन्ध ते प्रासार, पटियाला: पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाबी यूनि 2000

नाभा भाई कान्ह सिंह, महान कोश, पटियाला भाषा विभाग, पंजाब 1976

भाई वीर सिंह, श्री गुरु ग्रंथ कोश अमृतसर, खालसा ट्रस्ट सुसाइटी, 1983

सिंह किरपाल, वारां भाई गुरदास, अमृतसर, 1957

पैन्तल अजीत सिंह, सिख गुरुद्वारों के हरि कीर्तन में शास्त्रीय संगीत की परम्परा, लखनऊ भातखंडे संगीत विद्यापीठ, 1963

सिंह संतोष, गुर परताप सूरज ग्रंथ, अमृतसर : खालासा समाचार, हाल बाज़ार

सिंह गुरनाम, गुरमत संगीत प्रबन्ध ते प्रासार, पटियाला पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाबी यूनि 2000

पैन्तल गीता, पंजाब की संगीत परम्परा, नई दिल्ली : राधा पब्लिकेशन्स अंसारी रोड, दरियागंज, 1988

सिंह गुरनाम, गुरमत संगीत प्रबन्ध ते प्रासार, पटियाला पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाबी यूनि 2000

वही

वही

दरबार साहिब, अमृतसर से प्राप्त जानकारी अनुसार

सिंह गुरनाम, गुरमत संगीत प्रबन्ध ते प्रासार, पटियाला पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाबी यूनि 2000

पैन्तल अजीत सिंह, सिख गुरुद्वारों के हरि कीर्तन में शास्त्रीय संगीत की परम्परा, लखनऊ : भातखंडे संगीत विद्यापीठ, 1963

वही